LEARN GEETA
तस्मात् योगी भवार्जुन

॥ श्रीहरिः ॥
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

॥ गीता पढ़ें, पढ़ायें, जीवन में लायें ॥

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 17: श्रद्धात्रयविभागयोग

2/2 (श्लोक 14-28), रविवार, 04 मई 2025

विवेचक: गीताव्रती श्रीमती श्रुति जी नायक

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/iF3csyVyB6M

तप, दान और यज्ञ के प्रकार और महत्व

देशभक्ति गीत, भजन, हनुमान चालीसा पाठ, गुरु वन्दना, दीप प्रज्वलन एवम् प्रारम्भिक प्रार्थना के साथ सत्र का आरम्भ हुआ। सत्र संवाद परक रहा। बच्चों से पूछा गया-

प्रश्न - सत्रहवें अध्याय का नाम क्या है?
उत्तर - सत्रहवें अध्याय का नाम श्रद्धात्रयविभागयोग है।

प्रश्न - इस अध्याय में कितने प्रकार की श्रद्धा की बात कही गई है?
उत्तर - इस अध्याय में तीन प्रकार की श्रद्धा के बारे में बताया गया है।

जैसे कार्य हमने अपने पिछले जन्म में किए थे उसके फलस्वरूप हमें प्रकृति से हमारा स्वभाव प्राप्त होता है। हमारा स्वभाव हमारे जन्म से ही होता है और कोई अपने स्वभाव को अच्छे कार्यों के द्वारा उन्नत करते हैं।
कौन से स्वभाव वाले लोग कैसा आहार लेते हैं? यह हमने पिछले सत्र में देखा था।

सात्त्विक लोग सात्त्विक आहार लेते हैं। उनका बल और आयु बढ़ती है। बुद्धि का विकास होता है। सात्त्विक भोजन या आहार वह होता है जो हम श्रीभगवान् को अर्पण कर ग्रहण करते हैं। जो भोजन बनने के तीन घण्टे के अन्तराल में ले लिया जाता है, वह सात्त्विक कहलाता है।

राजसिक प्रवृत्ति वाले चटपटा तीखा भोजन पसन्द करते हैं और जब राजसिक भोजन की अति होती है तो स्वास्थ्य पर उसका प्रभाव दिखता है। शुगर बढ़ जाती है, बीपी हो जाता है, मोटापा बढ़ जाता है।

तामसिक भोजन बासी, दुर्गन्धयुक्त होता है।

जैसा अन्न वैसा मन। जैसा भोजन हम करते हैं वैसे ही हमारे विचार बनते हैं। माँ जो भी भोजन बनाए उसे प्रेम और प्रसन्नता से स्वीकार करना चाहिए। किस प्रकार का भोजन हमें करना चाहिए यह बात हमें पता चली।

आगे के तीन श्लोकों में यज्ञ के बारे में वर्णन किया जा रहा है। हवन को भी यज्ञ कहा जाता है। अग्नि प्रज्वलित कर उसमें समिधा, घी डाला जाता है। पण्डितजी मन्त्र उच्चारण करते हैं। यजमान स्वाहा का उच्चारण कर अग्नि में आहुति देते हैं। यह भी एक प्रकार का यज्ञ होता है।

जो भी कर्त्तव्य कर्म हम निष्ठा भाव से करते हैं, वह भी यज्ञ ही होता है। मनुष्य अपने-अपने स्वभाव के अनुसार भी यज्ञ करते हैं।

17.14

देवद्विजगुरुप्राज्ञ, पूजनं(म्) शौचमार्जवम्|
ब्रह्मचर्यमहिंसा च, शारीरं(न्) तप उच्यते||17.14||

देवता, ब्राह्मण, गुरुजन और जीवन्मुक्त महापुरुष का यथायोग्य पूजन करना, शुद्धि रखना, सरलता, ब्रह्मचर्य का पालन करना और हिंसा न करना - (यह) शरीर-सम्बन्धी तप कहा जाता है।

विवेचन - अब तीन प्रकार के तपों के बारे में बताया जा रहा है। शारीरिक तप, वाचिक तप अर्थात् वाणी का तप और मानसिक तप। शरीर के द्वारा किए जाने वाले तप शारीरिक तप कहलाते हैं।

वाणी द्वारा अथवा बोल कर जो तप किया जाता है, वह वाचिक तप कहलाता है।

जो तप मन से किए जाते हैं, वे मानसिक तप कहलाते हैं।

चौदहवें, पन्द्रहवें और सोलहवें श्लोक में शारीरिक तप की बात कही गई है।

यहाँ पर श्रीभगवान् बता रहे हैं कि हमें शरीर के द्वारा कैसा आचरण करना चाहिए, किसकी पूजा - अर्चना और उपासना करनी चाहिए?
हमें सभी देवताओं की पूजा करनी चाहिए। बहुत सारे देवता होते हैं, आप सभी की पूजा कर सकते हैं और जो देवता आपको पसन्द हैं उनकी पूजा भी कर सकते हैं। विष्णु भगवान् के बहुत से स्वरूप होते हैं। श्रीराम, श्रीकृष्ण विष्णु स्वरूप हैं, इनमें से किसी भी एक की पूजा अवश्य करनी चाहिए। सभी के अपने-अपने इष्ट देवता होते हैं। ग्राम देवता होते हैं, क्षेत्र देवता होते हैं। कोई शिवजी की पूजा करते हैं, कोई श्रीराम जी की पूजा करते हैं तो कोई श्रीकृष्ण की पूजा करते हैं। गणपति बप्पा की पूजा करनी चाहिए। सूर्य भगवान् को प्रतिदिन अर्घ्य देना चाहिए। देवी की पूजा करनी चाहिए। पाँच भगवानों की पूजा हमारे शास्त्रों में बताई गई है। विष्णु स्वरूप, जैसे (श्रीराम, श्रीकृष्ण, नारायण, विट्ठल), शिवजी, गणपति बप्पा, देवीजी (दुर्गा जी, सरस्वती जी, लक्ष्मी जी) एवं सूर्य भगवान्। सुबह जल्दी उठकर, स्नान कर सूर्य भगवान् को जल अर्पित करना चाहिए। सुबह बिना काले चश्मे के (सनग्लासेस) भी हम सूर्य भगवान् के दर्शन कर सकते हैं किन्तु यदि दोपहर में बारह बजे हम सूर्य को देखना चाहें तो सूर्य की रोशनी बहुत तेज होती है। उस समय हम सूर्य की ओर नहीं देख पाते।

ब्राह्मणों की पूजा करनी चाहिए। गुरु वन्दना करना चाहिए, जो हमें विद्या, ज्ञान देते हैं। विद्यालय में हमारे शिक्षक गण, हमारे माता-पिता, प्रतिदिन उन्हें प्रणाम करना चाहिए। उनका आशीर्वाद लेना चाहिए।
घर में जो भी बड़े हैं, दादा- दादी, नाना-नानी सभी बड़ों का आशीर्वाद लेना चाहिए। जो कार्य हम प्रतिदिन करते हैं उसकी हमें आदत हो जाती है। महान पुरुष, ज्ञानी जनों को भी प्रणाम करना चाहिए। जैसे हमारे स्वामी जी, उनसे हमें बहुत सा ज्ञान प्राप्त होता है, उनसे कथा सुनते हैं, विवेचन सुनते हैं, उन्हें भी वन्दन करना चाहिए।

शौच अर्थात् साफ-सफाई, यह हमने दैवासुरसम्पद्विभागयोग में भी देखा था। प्रतिदिन हमें स्नान करना चाहिए। आर्जवम् अर्थात् सामान्य, साधारण रहना। सरल स्वभाव होना। दिखावा (show off) नहीं करना चाहिए। इन्द्रियों पर नियन्त्रण रखना चाहिए। नाक, कान, जिह्वा, नेत्र, त्वचा, ये सब हमारी (sense organs) इन्द्रियाँ हैं। इन पर हमारा नियन्त्रण (control on our sense organs) होना चाहिए। जैसे हमें टीवी देखना है तो पूरे समय न देखकर कुछ समय ही देखना चाहिए। **इन्द्रियों के नियन्त्रण**

को ब्रह्मचर्य कहते हैं।

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखः।।6.17।।

जो भी करना है समानता से करना है। अहिंसा अर्थात् मारना ही नहीं होता है किसी के मन को भी दु:खी नहीं करना चाहिए। ये सब शारीरिक तप के अन्तर्गत आते हैं। मच्छर, चूहे बहुत अधिक मात्रा में हो रहे हैं तो ही मारना है, नहीं तो अनदेखा करना (ignore/avoid) चाहिए।

17.15

अनुद्वेगकरं(म्) वाक्यं(म्), सत्यं(म्) प्रियहितं(ञ्) च यत्|
स्वाध्यायाभ्यसनं(ञ्) चैव, वाङ्मयं(न्) तप उच्यते||17.15||

जो किसी को भी उद्विग्न न करने वाला, सत्य और प्रिय तथा हितकारक भाषण है (वह) तथा स्वाध्याय और अभ्यास (नाम जप आदि) भी - यह वाणी-सम्बन्धी तप कहा जाता है।

विवेचन - अब आता है वाचिक तप, हम सब एक दूसरे से बात करते हैं, माता-पिता से, मित्रों से। हमें ऐसे बात करना चाहिए कि किसी को बुरा न लगे, बहुत सोच समझ कर बात करनी चाहिए। एक बार हम कुछ बोल देते हैं तो उसे हम वापस नहीं ले सकते। सदैव सत्य ही बोलना चाहिए। सत्य बोलना है, इसका यह मतलब नहीं है कि कोई मोटा है तो उसे बोलें कि आप मोटे हो या कोई बहुत काला है तो उससे बोलें काले हो, सत्य है पर ऐसा नहीं बोलना चाहिए जिससे सामने वाले या सुनने वाले को बुरा लगे। प्रिय अर्थात् झूठ-मूठ में बढ़ा-चढ़ा कर भी बात नहीं करनी है।

एक वाक्य है जिसे मैं प्रेम से बोलूँ आप सब की पढ़ाई पूरी हो गई क्या? और एक में क्रोध से या जोर से बोलूँ आपने पढ़ाई कर ली क्या?

वाक्य एक ही था लेकिन एक कठोर वाणी से बोला गया और दूसरा मधुर वाणी से बोला गया, तो हमें कौन सा अच्छा लगेगा? जो हमें अच्छा लगता है, उसी तरह ऐसी बात बोलनी चाहिए जो दूसरे को भी अच्छी लगे।

हमें किसी की बुराई या निन्दा भी नहीं करनी चाहिए, स्वयं की प्रशंसा भी नहीं करनी चाहिए। हमारी वाणी ऐसी होनी चाहिए जिससे किसी को क्रोध भी न आए और बुरा भी न लगे और सत्य भी बोलें तो अच्छी तरह से बोलें जिससे किसी को बुरा न लगे। दूसरों का हित हो ऐसी वाणी होनी चाहिए।

स्वाध्याय करना चाहिए। जैसे गीता पढ़ें, पुराण, वेद, उपनिषद इनका पठन-पाठन करना चाहिए। महाभारत, रामायण और महान पुरुषों की जीवनी पढ़नी चाहिए। जब हम कुछ पढ़ते हैं तो उसका चिन्तन भी करते हैं। यह सब वाणी के तप के अन्तर्गत आता है।

हमारा मन सदैव प्रसन्न रहना चाहिए। मन को प्रसन्न रखने के लिए हमें क्या करना चाहिए?

जब हम अच्छे कार्य करते हैं, जब हम शारीरिक तप करते हैं, वाणी का तप करते हैं तो हमारा मन भी शान्त रहता है। प्रसाद अर्थात् प्रसन्न। हम श्रीभगवान् को भोग अर्पित करते हैं उसे भी प्रसाद कहते हैं। तब श्रीभगवान् भी प्रसन्न होते हैं। वे उसे स्वीकार करते हैं और हमें आशीर्वाद देते हैं। श्रीभगवान् का प्रसाद खाने से हमारा मन भी शुद्ध होता है। ज्ञान में वृद्धि होती है।

भोजन करने से पहले भी हाथ जोड़कर हमें '**श्रीकृष्णार्पणमस्तु**' कहना चाहिए। भोग अर्पित करते समय श्रद्धा और भक्ति होनी चाहिए। जिसका लड़ाई करने का स्वभाव होता है उनका मन कभी शान्त नहीं रहता। अभी आप विवेचन सुन रहे हैं, इसमें जो

बात आपको अच्छी लगी वह लिखकर रखें और अपने मित्रों के साथ साझा करें। हम जो भी नया सीखते हैं उसके बारे में मित्रों के साथ चर्चा करनी चाहिए।

17.16

मनः(फ्) प्रसादः(स्) सौम्यत्वं(म्), मौनमात्मविनिग्रहः|
भावसंशुद्धिरित्येतत्, तपो मानसमुच्यते||17.16||

मन की प्रसन्नता, सौम्य भाव, मननशीलता, मन का निग्रह (और) भावों की भली भाँति शुद्धि - इस तरह यह मन-सम्बन्धी तप कहा जाता है।

विवेचन - मन से मौन कैसे रहें? ध्यान से, भगवन्नाम स्मरण से, श्रीभगवान् का चिन्तन करके, स्वाध्याय से हमारा ध्यान श्रीभगवान् पर रहता है तब मन मौन रहेगा। यदि हम साधारण रूप से आँख बन्द करते हैं तो मन में विचार चलते रहते हैं। मन मौन नहीं रहता है, कोई न कोई विचार आते ही रहते हैं। मन प्रसन्न तब रहता है जब मन में शान्ति होती है और जब हम दूसरों के लिए अच्छा कार्य करते हैं। हमारा मन, हमारा अन्तःकरण, हमारे भाव इन सब को शुद्ध, साफ रखना बहुत ही आवश्यक है। दाँतों को हम टूथपेस्ट, टूथब्रश से साफ कर लेते हैं, शरीर को हम साबुन से साफ कर लेते हैं, मन को हम कैसे साफ कर सकते हैं?
भगवन्नाम स्मरण, भगवत् चिन्तन के द्वारा हम अपने मन को शुद्ध और साफ कर सकते हैं।

यह एक दिन में नहीं होगा, निरन्तर थोड़ा-थोड़ा प्रयास करने से सम्भव हो सकेगा। भजन करना है, जप करना है तो थोड़ा तो प्रयास करना ही पड़ेगा। श्रीभगवान् से प्रार्थना करें, हमें सद्बुद्धि दीजिए, ज्ञान दीजिए।

दैवीय गुणों के बारे में हम जानते हैं। जब इनका प्रतिदिन चिन्तन करेंगे तो हमारा भाव, हमारा मन, अन्तःकरण शुद्ध होता जाएगा। मन/भाव शुद्ध हुआ तो हमारे कार्य भी शुद्ध होते जाएँगे।

आपने सुना होगा कि कई व्यक्ति बहुत सालों से तप कर रहे हैं, बहुत सालों से स्वाध्याय कर रहे हैं पर उनके स्वभाव में, व्यवहार में कोई परिवर्तन नहीं आया, वह इसलिए कि भाव शुद्ध नहीं हुए तो तप और स्वाध्याय से कोई अन्तर नहीं होगा। आपके साथ भी ऐसा होता है न? पढ़ाई करते समय मन कहीं और होता है, माँ ने क्या भोजन बनाया होगा? पिताजी दफ्तर (office) से आते समय मेरे लिए क्या लेकर आएँगे? मैं मित्रों के साथ खेलने कब जाऊँगा? इत्यादि। दस घण्टे तक यही सोचते रहेंगे तो न तो पढ़ाई होगी और न ज्ञान प्राप्त होगा, लेकिन यदि थोड़ी सी देर भी पूरे ध्यान से मन को एकाग्र करके पढ़ेंगे तो जल्दी समझ आएगा और याद भी हो जाएगा।

यदि हमारा अन्तःकरण शुद्ध होता है तो हमारे सभी कार्य अच्छे से पूर्ण होते हैं। हमारे भावों को शुद्ध करने का प्रयास करना बहुत ही महत्त्वपूर्ण और आवश्यक है।

प्रतिदिन श्रद्धा और भक्ति से गीता जी का एक अध्याय अवश्य पढ़ना है। आप एक माला, दो माला का जाप भी कर सकते हैं। अभी बचपन से ही करने का अभ्यास करेंगे तो बड़े होने पर वह आदत बन जाएगी। ये सब हमारे मन के तप हैं।

तप का अर्थ होता है कि निरन्तर लम्बे समय तक कोई कार्य करते रहना। तभी उसका परिणाम या प्रभाव हम पर दिखता है। जैसे हमने सात्त्विक, राजसिक और तामसिक यज्ञ देखे, इसी तरह हमारे शारीरिक तप, राजसिक, सात्त्विक और तामसिक हो सकते है। वाणी का तप भी सात्त्विक, राजसिक और तामसिक हो सकता है और मन का तप भी सात्त्विक, राजसिक और तामसिक हो सकता है। मन प्रसन्न तब रहता है मन में शान्ति तब होती है, जब हम दूसरों के लिए अच्छा कार्य करते हैं।

17.17

श्रद्धया परया तप्तं(न्), तपस्तत्त्रिविधं(न्) नरैः|
अफलाकाङ्क्षिभिर्युक्तैः(स्), सात्त्विकं(म्) परिचक्षते||17.17||

परम श्रद्धा से युक्त फलेच्छा रहित मनुष्यों के द्वारा (जो) तीन प्रकार (शरीर, वाणी और मन) - का तप किया जाता है, उसको सात्त्विक कहते हैं।

विवेचन - अभी आपको बताया गया था कि फल की अपेक्षा (expectation) के बिना, श्रद्धा से, भक्ति से तथा निष्ठा से किया जाने वाला तप "सात्त्विक तप" कहलाता है। यह तप शारीरिक भी हो सकता है, मानसिक भी हो सकता है तथा वाणी का भी हो सकता है।

17.18

सत्कारमानपूजार्थं(न्), तपो दम्भेन चैव यत्|
क्रियते तदिह प्रोक्तं(म्), राजसं(ञ्) चलमध्रुवम्||17.18||

जो तप सत्कार, मान और पूजा के लिये तथा दिखाने के भाव से किया जाता है, वह इस लोक में अनिश्चित (और) नाशवान फल देने वाला (तप) राजस कहा गया है।

विवेचन - यदि हम तप करते हैं और उसके बदले में फल की अपेक्षा करते हैं, जैसे आज मैंने किसी की सहायता की तो उसके बदले में, मैं कुछ फल की अपेक्षा या इच्छा करती हूँ, तो वह राजसिक तप कहलाता है। इसी प्रकार जब हम दिखावे के लिए तप करते हैं तो वह भी राजसिक तप कहलाता है।

17.19

मूढग्राहेणात्मनो यत्, पीडया क्रियते तपः|
परस्योत्सादनार्थं(म्) वा, तत्तामसमुदाहृतम्||17.19||

जो तप मूढ़तापूर्वक हठ से अपने को पीड़ा देकर अथवा दूसरों को कष्ट देने के लिये किया जाता है, वह (तप) तामस कहा गया है।

विवेचन - जब हम अज्ञान से या हठ (जिद) से तथा दूसरों को दुःख पहुँचाने के लिए कोई तप करते हैं तो वह तामसिक तप कहलाता है।
आपने सुना होगा कि हिरण्यकश्यपु ने भी तप किया था तथा वरदान भी प्राप्त किया था किन्तु वे अपने आप को ही श्रेष्ठ (best) और श्रीभगवान् से भी बड़ा मानते थे। यह तप तामसिक तप होता है। ऐसे व्यक्ति केवल अपने उद्धार के लिए तप करते हैं। उस तप में श्रद्धा नहीं होती है तथा वे दूसरों के भले के लिए तप नहीं करते हैं।

अगले तीन श्लोकों में दान के विषय में बताया गया है। दान भी तीन प्रकार के होते हैं- सात्त्विक, राजसिक तथा तामसिक। वैसे दान तो सात्त्विक ही रहता है किन्तु दान करने वाले व्यक्ति के स्वभाव से वह सात्त्विक, राजसिक या तामसिक दान हो जाता है।

17.20

दातव्यमिति यद्दानं(न्), दीयतेऽनुपकारिणे|
देशे काले च पात्रे च, तद्दानं(म्) सात्त्विकं(म्) स्मृतम्||17.20||

दान देना कर्तव्य है - ऐसे भाव से जो दान देश, काल और पात्र के प्राप्त होने पर अनुपकारी को अर्थात् निष्काम भाव से दिया जाता है, वह दान सात्त्विक कहा गया है।

विवेचन - दान का अर्थ होता है "देना"। किसी व्यक्ति को किसी वस्तु की आवश्यकता (need) हो तो उसे कुछ देना दान कहलाता है। हम किसी को कुछ नहीं देते बल्कि जो हमें श्रीभगवान् ने दिया है, उसी को हम किसी ऐसे व्यक्ति को देते हैं जिसे उसकी आवश्यकता होती है। जैसे किसी को बहुत अधिक सर्दी लग रही है और उसके पास ओढ़ने के लिए कुछ नहीं है, तो यदि हम उसे उस समय कम्बल देंगे तो वह सात्त्विक दान हो जाएगा। अगर हम उसे कम्बल देकर कहेंगे कि इसके बदले में तुम मेरा यह कार्य करो, तो यह सात्त्विक दान नहीं रह जाएगा। इसी प्रकार यदि मेरे किसी मित्र के पास पहले से ही दस चादरें या कम्बल हैं और हमने जाकर उसे एक और कम्बल दे दिया तो वह दान नहीं है क्योंकि उसे उस कम्बल की आवश्यकता ही नहीं है।

आपने सुना होगा कि जब दाहिने हाथ (right hand) से दान करते हैं तो बाएँ हाथ (left hand) को भी पता नहीं चलना चाहिए। हमें हमेशा गुप्त दान (secret donation) करना चाहिए और देने के बाद उसे बिलकुल भूल जाना चाहिए क्योंकि वह दान श्रीभगवान् हमसे करवाते हैं। श्रीभगवान् जिन्हें देते हैं, उन्हीं को दूसरों को देने के लिए प्रेरणा देते हैं। हमें मन में यह भावना नहीं रखनी है कि "मैंने दिया"।

यदि हम दान देते समय दम्भ या घमण्ड दिखाते हैं तो वह दान राजसिक हो जाता है।

यहाँ देश, काल तथा पात्र, तीन स्थितियों को बताया गया है कि सही स्थान पर, सही समय पर तथा सही व्यक्ति को दिया गया दान सात्त्विक दान होता है।

दान अनेक प्रकार के होते हैं जैसे- रक्तदान, नेत्रदान, अन्नदान, वस्तुदान तथा धन का दान आदि। दान देते समय हमारा भाव शुद्ध होना चाहिए। कहीं से चोरी करके लाकर कुछ वस्तु किसी को दे दी तो वह भी दान नहीं है।

17.21

यत्तु प्रत्युपकारार्थं(म्), फलमुद्दिश्य वा पुनः|
दीयते च परिक्लिष्टं(न्), तद्दानं(म्) राजसं(म्) स्मृतम्||17.21||

किन्तु जो (दान) क्लेशपूर्वक और प्रत्युपकार के लिये अथवा फल-प्राप्ति का उद्देश्य बनाकर फिर दिया जाता है, वह दान राजस कहा जाता है।

विवेचन - यदि हम दान देते समय फल की अपेक्षा (expectation) करेंगे तो वह दान राजसिक दान होगा। दान देते समय फोटो लेना या सेल्फी लेना भी राजसिक दान होता है। अभिमान से किया जाने वाला दान राजसिक दान होता है।

17.22

अदेशकाले यद्दानम्, अपात्रेभ्यश्च दीयते|
असत्कृतमवज्ञातं(न्), तत्तामसमुदाहृतम्||17.22||

जो दान बिना सत्कार के तथा अवज्ञापूर्वक अयोग्य देश और काल में कुपात्र को दिया जाता है, वह (दान) तामस कहा गया है।

विवेचन- जिस व्यक्ति को आवश्यकता नहीं है, उसे दिया गया दान या किसी ऐसी वस्तु का दान जिसकी उसे आवश्यकता नहीं है, जैसे कोई वस्त्र (dress) पुराना हो गया है और हम उसे नहीं पहनते, तो ऐसी वस्तुओं का दान भी वैसे तो दान ही नहीं है लेकिन उसे तामसिक दान कह सकते हैं। वह दान हमने अच्छे भाव से या सत्कार्य के भाव से नहीं किया है केवल दिखावे के लिए किया है, इसलिए वह तामसिक दान है,
इसलिए जब भी दान करें तो हमें हमेशा ध्यान रखना है कि सात्त्विक दान करना है।

17.23

ॐ तत्सदिति निर्देशो, ब्रह्मणस्त्रिविधः(स्) स्मृतः|
ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च, यज्ञाश्च विहिताः(फ्) पुरा||17.23||

ॐ, तत् और सत् - इन तीन प्रकार के नामों से (जिस) परमात्मा का निर्देश (संकेत) किया गया है, उसी परमात्मा से सृष्टि के आदि में वेदों तथा ब्राह्मणों और यज्ञों की रचना हुई है।

विवेचन - इस श्लोक में तीन महत्त्वपूर्ण (important) शब्द हैं- "**ॐ, तत् तथा सत्**" ये तीनों श्रीभगवान् के नाम हैं। हम सामान्यतः श्रीभगवान् को इन तीन नामों से जानते हैं। आपने ध्यान दिया होगा कि हम जब भी मन्त्र का जाप करते हैं तो ॐ से ही आरम्भ करते हैं। इसका पठन करके ही हम श्रीमद्भगवद्गीता का पाठ करते हैं। आप इसे श्रीभगवान् का टेलीफोन नम्बर समझ कर याद रख सकते हैं। जब आप **ॐ** बोलकर श्रीभगवान् से जुड़ते हैं तो श्रीभगवान् को पता चल जाता है कि इन्होंने मुझे **ॐ** कहकर पुकारा है और ये अभी मेरा पाठ या कोई अच्छा कार्य करने जा रहे हैं। तब श्रीभगवान् हमारे ऊपर ध्यान देंगे (Observe)।

ॐ शब्द तीन अक्षरों से मिलकर बना है- "**अकार, उकार तथा मकार।"** आपको भी जब कुछ अच्छे कार्य करने हों तो आप भी **ॐ** कहकर श्रीभगवान् को याद कर सकते हैं।

तत् अर्थात् वे ईश्वर।
सत् का अर्थ है सत्य (truth)। श्रीभगवान् सत्य हैं। श्रीभगवान् के समान जो अच्छे कार्य अथवा भाव हैं, उनके पहले हम सत् लगाते हैं, जैसे सत्कार्य, सत्पुरुष, सद्बुद्धि, सद्भाव आदि।

ये तीन प्रकार के नाम **सच्चिदानन्द, अर्थात् सत्, चित् तथा आनन्द हैं,** ये हमारे श्रीभगवान् हैं। हम श्रीभगवान् को स्मरण करते हैं तब हमें जो आनन्द मिलता है उसे हम सच्चिदानन्द कहते हैं।

ब्राह्मण भी हमेशा "ॐ, तत्, सत्" बोलकर ही पूजन आरम्भ करते हैं। यज्ञ, दान तथा तप करते समय भी इनका स्मरण किया जाता है।

आगे के तीन श्लोकों में इनके विषय में विस्तार से बताया गया है।

17.24

तस्मादोमित्युदाहृत्य, यज्ञदानतपः(ख्) क्रियाः|
प्रवर्तन्ते विधानोक्ताः(स्), सततं(म्) ब्रह्मवादिनाम्||17.24||

इसलिये वैदिक सिद्धान्तों को मानने वाले पुरुषों की शास्त्रविधि से नियत यज्ञ, दान और तप रूप क्रियाएँ सदा 'ॐ' इस परमात्मा के नाम का उच्चारण करके (ही) आरम्भ होती हैं।

विवेचन - जैसे वेद मन्त्र में ऊँ का उच्चारण करते हैं। शास्त्र विधि और श्रद्धा से श्रेष्ठ पुरुष यज्ञ, दान और तप करते समय ऊँ का उच्चारण करते हैं।

17.25

तदित्यनभिसन्धाय, फलं(म्) यज्ञतपः(ख्) क्रियाः|

दानक्रियाश्च विविधाः(ख्), क्रियन्ते मोक्षकाङ्क्षिभिः||17.25||

तत्' नाम से कहे जाने वाले परमात्मा के लिये ही सब कुछ है - ऐसा मान कर मुक्ति चाहने वाले मनुष्यों द्वारा फल की इच्छा से रहित होकर अनेक प्रकार की यज्ञ और तप रूप क्रियाएँ तथा दान रूप क्रियाएँ की जाती हैं।

विवेचन - यज्ञ के समय जो हम अर्पण या समर्पण करते हैं वह **तत्** को ही करते हैं। पुस्तक स्वरूप श्रीभगवान को हम समर्पण करते हैं। यज्ञ, दान और अपनी समस्त क्रिया उस परमात्मा को अर्पण करते हैं।

17.26

सद्भावे साधुभावे च, सदित्येतत्प्रयुज्यते|
प्रशस्ते कर्मणि तथा, सच्छब्दः(फ्) पार्थ युज्यते||17.26||

हे पार्थ ! सत्- ऐसा यह परमात्मा का नाम सत्ता मात्र में और श्रेष्ठ भाव में प्रयोग किया जाता है तथा प्रशंसनीय कर्म के साथ 'सत्' शब्द जोड़ा जाता है।

विवेचन - सत् उस परमपिता परमात्मा का नाम है। श्रीभगवान् की पूजा करते समय हमें भी श्रेष्ठ भाव रखना चाहिए। प्रार्थना करनी चाहिए कि हमें भी श्रीभगवान् सद्बुद्धि दें, सुज्ञान दें। हम सत्कर्म करें, अच्छे कर्म करें। सत् विशेषण सभी अच्छे कार्यों के पहले लगता हैं। श्रीभगवान सत् स्वरूप हैं।

17.27

यज्ञे तपसि दाने च, स्थितिः(स्) सदिति चोच्यते|
कर्म चैव तदर्थीयं(म्), सदित्येवाभिधीयते||17.27||

यज्ञ तथा तप और दान रूप क्रिया में (जो) स्थिति (निष्ठा) है, (वह) भी 'सत्' - ऐसे कही जाती है और उस परमात्मा के निमित्त किया जाने वाला कर्म भी 'सत्' - ऐसा ही कहा जाता है।

विवेचन - यज्ञ, दान और तप की जो स्थिति है, वह हमेशा सात्त्विक ही होती है। जब हम कोई भी यज्ञ, दान, तप फल की आकाङ्क्षा, इच्छा और राजसिक बुद्धि से करते हैं तो वह राजसिक और तामसिक हो जाता है। सात्त्विक रूप से जो यज्ञ, दान, तप है, वही सत् है।

17.28

अश्रद्धया हुतं(न्) दत्तं(न्), तपस्तप्तं(ङ्) कृतं(ञ्) च यत्|
असदित्युच्यते पार्थ, न च तत्प्रेत्य नो इह||17.28||

हे पार्थ ! अश्रद्धा से किया हुआ हवन, दिया हुआ दान (और) तपा हुआ तप तथा (और भी) जो कुछ किया जाय, (वह सब) 'असत्' - ऐसा कहा जाता है। उसका (फल) न तो यहाँ होता है और न मरने के बाद ही होता है अर्थात् उसका कहीं भी सत् फल नहीं होता।

विवेचन - श्रीभगवान् इस श्लोक में अर्जुन को पार्थ कहकर सम्बोधित करते हैं। आप सभी को पता है पार्थ किसका नाम है? हाँ, बिल्कुल सही, पार्थ अर्जुन का नाम है। श्रीभगवान् कहते हैं, हे अर्जुन! जो बिना श्रद्धा के यज्ञ, दान, तप करते हैं उसे असत् कहा जाता है। उस प्रकार के यज्ञ, दान, तप का न तो इहलोक में (इस लोक में) और न ही परलोक में कोई परिणाम या फल प्राप्त होता है। यही बात हमने सोलहवें अध्याय में समझी थी कि शास्त्रों के बिना यदि कोई यज्ञ, दान, तप किया जाए तो उसका क्या परिणाम होता है? उसे परम गति प्राप्त नहीं होती है। इसी प्रकार जो श्रद्धा के बिना यज्ञ, दान, तप करते हैं, उन्हें कोई फल या लाभ प्राप्त नहीं होता है।

जो सत्कर्म करें, वे श्रद्धा के साथ करें। जो भी कार्य हम करते हैं उसका फल हमें श्रीभगवान् अवश्य ही देंगे। जो भी कर्म करें वह श्रीभगवान् को अर्पित करते हुए, श्रीभगवान् का स्मरण करते हुए करें। फल तो हमें प्राप्त होगा ही। वह कब होगा? यह निश्चित नहीं होता। जो भी कार्य करें, भगवत् प्राप्ति के भाव से और श्रद्धा से करें। श्रवण, मनन, चिन्तन करने का प्रयास करें।

गीता परिवार के ध्येय वाक्य का पालन करने का प्रयास करें "**गीता पढ़े, पढ़ाये, जीवन में लाये"।**

साधकों की जिज्ञासाओं के समाधान के साथ आज का सत्र सम्पन्न हुआ।

प्रश्नोत्तर

प्रश्नकर्ता -नव्या अधिकारी दीदी
प्रश्न - प्रत्येक अध्याय के अन्त में पुष्पिका क्यों गाई जाती है?
उत्तर - पुष्पिका का अर्थ है फूल। पुष्पिका गाकर हम श्रीभगवान् के चरणों में फूल अर्पित करते हैं। श्रीभगवान् का धन्यवाद करते हैं। ॐ तत् सत् कहते हुए श्रीमद्भगवद्गीता के माध्यम से श्रीकृष्ण ने उपनिषदों का सार अर्जुन से कहा है, जिसे नित्य पढ़ने से आत्मा का परमात्मा से योग होता है। यह सामान्य विद्या नहीं है, अपितु ब्रह्म विद्या है। अन्त में अध्याय का नाम और सङ्ख्या भी कही जाती है।

प्रश्नकर्ता - बी. भुनेश भैया
प्रश्न - हमें किन-किन देवताओं की पूजा करना चाहिए? क्या नित्य पूजा करना आवश्यक है?
उत्तर - जी हाँ, नित्य एक देवता की पूजा करना ही चाहिए। विष्णु स्वरूप देवता अर्थात् भगवान विष्णु के अवतार, शिवजी, गणेश जी, दुर्गा माँ/लक्ष्मी/सरस्वती और सूर्य देवता ये पाँच देवता हैं जिनमें से किसी एक की पूजा अवश्य करना चाहिए।

प्रश्नकर्ता - सत्यम शर्मा भैया
प्रश्न - श्रीकृष्ण और अश्वत्थामा में युद्ध कहाँ हुआ था?
उत्तर - महाभारत में कुरुक्षेत्र युद्ध भूमि में। अश्वत्थामा कौरवों के पक्ष में थे।

प्रश्नकर्ता - अन्वेषा मिश्रा दीदी
प्रश्न - गुस्से पर नियन्त्रण कैसे किया जा सकता है?
उत्तर - गुस्सा सभी को आता है। जब भी हमें गुस्सा आता है तो उलटी गिनती शुरू कर देनी चाहिए जिससे सोचने का समय मिलता है और हमारा गुस्सा कम होने लगता है। साथ ही हमें यह भी स्मरण करते रहना चाहिए कि भगवद्गीता में हमने पढ़ा है कि क्रोध करना अच्छी बात नहीं है। धीरे-धीरे हम अपने क्रोध पर नियन्त्रण ला सकते हैं। धर्म और मातृभूमि की रक्षा के लिए क्रोध करना चाहिए।

प्रश्नकर्ता - खुशी धारवाल दीदी
प्रश्न - भगवान श्रीकृष्ण के कितने भाई और बहन थे?
उत्तर - यह तो हम सभी जानते हैं कि कँस ने श्रीकृष्ण के सात भाई-बहनों की हत्या कर दी थी। उनके अलावा श्री बलराम उनके भाई और अभिमन्यु की माता सुभद्रा उनकी बहन थीं।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासु उपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां(म्) योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे श्रद्धात्रयविभागयोगो नाम सप्तदशोऽध्याय:।।

इस प्रकार ॐ तत् सत् - इन भगवन्नामों के उच्चारणपूर्वक ब्रह्मविद्या और योगशास्त्रमय श्रीमद्भगवद्गीतोपनिषदरूप श्रीकृष्णार्जुनसंवाद में 'श्रद्धात्रयविभागयोग' नामक सत्रहवाँ अध्याय पूर्ण हुआ।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
Let's come together with the motto of Geeta Pariwar, and gift our Geeta Classes to all our Family, friends & acquaintances

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||